कमलेश बाबू एवं अन्य

बनाम

लाजपत राय शर्मा एवं अन्य

(सिविल अपील संख्या 2815/2008)

16 अप्रैल 2008

[ए.के. माथुर और अल्तमस कबीर, जे.जे.]

परिसीमा अधिनियम, 1963 धारा 3(1) और अनुच्छेद 59 - पंजीकृत वसीयत के आधार पर अपीलकर्ताओं के पक्ष में संपत्ति परिवर्तित की गई। - प्रत्यर्थी नंबर 1 ने यह घोषित करने के लिए मुकदमा दायर किया कि उक्त वसीयत धोखाधड़ी करके हासिल की गई थी - हालांकि, मुकदमे में सभी विवाद्यक प्रत्यर्थी नंबर 1 के खिलाफ तय किए गए और मुकदमा खारिज कर दिया गया, ट्रायल कोर्ट ने यह भी माना कि मुकदम परिसीमा से वर्जित था। अपीलीय न्यायालय ने परिसीमा के प्रश्न पर निर्णय किए बिना विचारण न्यायालय के फैसले को पलट दिया - उच्च न्यायालय ने परिसीमा से संबंधित प्रश्न पर निर्णय किए बिना, प्रथम अपीलीय न्यायालय के फैसले की पुष्टि की - अपील पर, माना गया: तत्काल मामले में, लिखित कथन में परिसीमा की प्रतिरक्षा स्थापित की गई थी हालांकि उस संबंध में कोई विवाद्यक नहीं बनाया गया था, हालांकि, जब विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था, तो

यह प्रथम अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय का भी कर्तव्य था कि वह उक्त प्रश्न पर विचार करे और मुकदमे में तय किए गए विभिन्न विवाद्यकों पर विचारण न्यायालय के फैसले को पलटने से पहले उसी पर निर्णय लेना - भले ही प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा विभिन्न विवाद्यकों पर प्रत्यर्थी नंबर 1 के पक्ष में निर्णय लिया गया था, लेकिन उनका कोई फायदा नहीं हुआ। चूंकि मुकदमा परिसीमा अधिनियम की धारा 59 के तहत वर्जित बना हुआ है। - उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया गया ने, सीमित प्रश्न का निर्णय करने के लिए प्रथम अपीलीय न्यायालय को भेजा गया कि क्या मुकदमा विचारण न्यायालय द्वारा पाए गए परिसीमा द्वारा वर्जित था - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश.7, नियम .11(डी). संपत्ति को एक पंजीकृत वसीयत के आधार पर अपीलकर्ताओं के पक्ष में परिवर्तित कर दिया गया था। प्रत्यर्थी नंबर 1 ने यह घोषणा करने के लिए मुकदमा दायर किया कि उक्त वसीयत किसके द्वारा खरीदी गई थी धोखाधड़ी का अभ्यास करना.

यद्यपि, मुकदमे के सभी विवाद्यकों प्रत्यर्थी नंबर 1 के खिलाफ तय किए गए थे और मुकदमा खारिज कर दिया गया था, इसके अलावा, विचारण न्यायालय ने यह भी माना कि मुकदमा परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 59 के तहत परिसीमा द्वारा वर्जित था। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने परिसीमा के प्रश्न पर निर्णय किए बिना विचारण न्यायालय के

फैसले को पलट दिया। उच्च न्यायालय ने प्रथम अपीलीय न्यायालय के फैसले की पुष्टि की।

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ता की ओर से यह प्रस्तुत किया गया था कि प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने परिसीमा से संबंधित प्रश्न पर निर्णय किए बिना विचारण न्यायालय के फैसले को उलटने में गलती की थी और केवल उस आधार पर उनके निर्णय अपास्त किये जाने योग्य थे।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए, अभिनिर्धारित किया:

1.1. परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3(1) न्यायालय पर किसी मुकदमे या अपील या आवेदन को खारिज करने का कर्तव्य डालती है, यदि यह निर्धारित अवधि के बाद किया गया है, हालांकि, परिसीमा को बचाव के रूप में स्थापित नहीं किया गया है। परिसीमा अधिनियम की धारा 3(1) के अलावा, यहां तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 7 नियम 11(डी) भी न्यायालय को एक वादपत्र को अस्वीकार करने का अधिकृत आदेश देता है, जहां वादपत्र में दिए गए कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि मुकदमा किसी विधि द्वारा वर्जित है। किसी भी कानून द्वारा, इस मामले में परिसीमा के कानून द्वारा। [पैरा 17,21] [660-ए, बी; 661-बी, सी]

1.2. मौजूदा मामले में, लिखित कथन में परिसीमा का बचाव किया गया था, हालांकि उस संबंध में कोई विवाद्यक नहीं बनाया गया था।

हालाँकि, जब विचारण न्यायालय धारा 3(1) के आदेश के अनुसार इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है, तो यह प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय का भी कर्तव्य था कि वह उक्त प्रश्न पर पाये और मुकदमे में तय किए गए विभिन्न विवाद्यकों पर विचारण न्यायालय के फैसले को पलटने से पहले उस पर निर्णय लेना। यद्यपि प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा विभिन्न विवाद्यको का निर्णय वादी-प्रत्यर्थी संख्या 1 के पक्ष में किया गया था, फिर भी वही कोई फायदा नहीं हुआ क्योंकि मुकदमा परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 59 के तहत वर्जित बना रहा। [पैरा 18] [660-बी, सी, डी]

1.3. प्रत्यर्थीयों की दलील है कि परिसीमा का तर्क अपीलीय मंचों के समक्ष नही लिया जा सकता है, लेकिन इसे संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत कार्यवाही में इस न्यायालय के समक्ष इस आधार पर नहीं लिया जा सकता है कि परिसीमा का प्रश्न कानून और तथ्य का  एक मिश्रित प्रश्न था। इस तथ्य से निरस्त हो जाते हैं कि अपीलीय न्यायालयों के निर्णयों के बाद मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित बना रहा क्योंकि विचारण न्यायालय के ऐसे निष्कर्ष को पहली अपील में या दूसरी अपील में उच्च न्यायालय द्वारा रद्द नहीं किया गया था। [पैरा 19] [660-ई, एफ]

1.4. उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री को रद्द कर दिया गया है और मुकदमे को प्रथम अपीलीय अदालत में सीमित प्रश्न का निर्णय करने

के लिए भेज दिया गया है कि क्या मुकदमे को विचारण न्यायालय द्वारा निर्धारित परिसीमा द्वारा वर्जित किया गया था। यदि मुकदमा इस प्रकार वर्जित पाया जाता है तो अपील खारिज कर दी जाएगी। यदि मुकदमा कालातीत नहीं पाया जाता है, तो अन्य विवाद्यकों पर प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय में परेशान नहीं की जाएगी। [पैरा 22] [661-एफ, जी]

पंजाब राज्य बनाम दर्शन सिंह (2004) 1 एससीसी 328; बालासरिया कंस्ट्रक्शन (पी) लिमिटेड बनाम हनुमान सेवा ट्रस्ट और अन्य। (2006) 5 एससीसी 658; नार्ने राम मूर्ति बनाम रावुला एफ सोमसुंदरम और अन्य। (2005) 6 एससीसी 614 और लछमी सेवक साहू बनाम राम रूप साहू एवं अन्य। एआईऔर (1944) प्रिवी काउंसिल 24 - संदर्भित।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2815/2008

1983 की द्वितीय अपील संख्या 2281 में उच्च न्यायालय, इलाहाबाद के अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 06.02.2006 से।

अपीलकर्ताओं की ओर से एस.बी. सान्याल, नरेश कौशिक, सतीश दयानन्दन, मनीष कौशिक और ललिता कौशिक।

प्रत्यर्थियों की ओर से रचना श्रीवास्तव।

अल्तमस कबीर, जे. द्वारा न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

1. अनुमति स्वीकृत।

2. इस अपील में उन पक्षों के बीच विवाद शामिल है जो एक-दूसरे से संबंधित हैं, जिनके पूर्वज समान हैं। इस विवाद में 5 अगस्त, 1972 की एक पंजीकृत वसीयत शामिल है, जिसे अपीलकर्ताओं के पक्ष में बृजलाल (मृतक) द्वारा निष्पादित किया गया था, जिनके चार बेटे थे। उनके सबसे छोटे बेटे ओंकार प्रसाद को छोड़कर बाकी सभी बेटे कथित तौर पर उनसे अलग हो गए थे और अलग रह रहे थे। बृजलाल ओंकार प्रसाद के साथ रह रहे थे और अपने अन्य बच्चों के वंशजों को छोड़कर ओंकार प्रसाद के माध्यम से अपने पोते-पोतियों के पक्ष में 5 अगस्त, 1972 को उक्त वसीयत निष्पादित की। 5 नवंबर, 1976 को बृजलाल की मृत्यु हो गई, और उनके द्वारा निष्पादित वसीयत के आधार पर, अपीलकर्ताओं ने वसीयत की गई संपत्तियों को उनके नाम पर बदलने के लिए एक आवेदन दायर किया। वसीयतकर्ता के पोते-पोतियों में से एक, प्रत्यर्थी नंबर 1 ने, दूसरे बेटे शांति स्वरूप, ने भी उत्परिवर्तन के लिए एक आवेदन दायर किया, जिसे खारिज कर दिया गया। जिसके विरूद्ध की गई अपील भी खारिज कर दी गई। 29 अप्रैल, 1977 को, तहसीलदार ने उपरोक्त वसीयत दिनांक 5 अगस्त, 1972 के आधार पर अपीलकर्ताओं के नाम पर संपत्तियों के उत्परिवर्तन का आदेश पारित किया।

3. 2 जनवरी, 1978 को, प्रत्यर्थी नंबर 1 ने घोषणा के लिए एक मुकदमा दायर किया कि 5 अगस्त, 1972 की पंजीकृत वसीयत धोखाधड़ी करके हासिल की गई थी। यहां अपीलकर्ताओं द्वारा लिखित कथन दाखिल

करके मुकदमे का विधिवत विरोध किया गया। दलीलों के आधार पर, मुकदमे में निर्णय पर पहुंचने के लिए, निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए: -

(i) क्या बृजलाल द्वारा प्रतिवादी 2 से 6 के पक्ष में दिनांक 5 अगस्त 1972 की निष्पादित वसीयत जाली है और वादी पर बाध्यकारी नहीं है?

(ii) क्या वादी अपने हिस्से की विवादित संपत्ति पर कब्ज़ा पाने का हकदार है?

(iii) क्या मुक़दमे का मूल्यांकन कम किया गया था और भुगतान की गई अदालती फीस अपर्याप्त थी?

(iv) क्या बृजलाल को अपनी संपत्ति की वसीयत निष्पादित करने का अधिकार मिला था?

(v) क्या बृजलाल विवादित संपत्ति का एकमात्र मालिक था?

(vi) वादी किस राहत का, यदि कोई हो, हकदार है?

4. उपरोक्त सभी विवाद्यकों का निर्णय वादी के खिलाफ किया गया और वाद विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया। जबकि विवाद्यक नंबर 6 पर निर्णय लिया, विचारण न्यायालय ने यह भी माना कि मुकदमा परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 59 के तहत वर्जित था, क्योंकि वादी यह साबित करने में विफल रहा था कि वाद प्रस्तुत करने के तीन साल के भीतर वादी को वसीयत की जानकारी नहीं थी।

5. मुकदमे में निर्णय से व्यथित होकर, वादी-प्रत्यर्थी नंबर 1 ने सिविल जज, अलीगढ़ के समक्ष अपील दायर की, जिसे स्वीकार कर लिया गया और परिसीमा के प्रश्न पर निर्णय किए बिना विचारण न्यायालय के फैसले को उलट दिया गया जो वादी-प्रत्यर्थी नंबर 1 के खिलाफ और प्रत्यर्थी-अपीलकर्ताओं के पक्ष में फैसला सुनाया गया था

6. प्रतिवादी-अपीलकर्ताओं ने 3 अक्टूबर, 1983 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील दायर की, और अपीलीय न्यायालय के निर्णय और आदेश की पुष्टि करते हुए, इसे 6 फरवरी, 2006 को खारिज कर दिया गया।

7. इस अपील में, मुख्य बिंदु जो अपीलकर्ता की ओर से आग्रह किया गया था कि यद्यपि मुकदमे में सभी विवाद्यकों का निर्णय विचारण न्यायालय द्वारा वादी-प्रत्यर्थी नंबर 1 के खिलाफ किया गया था, इसके अलावा, विचारण न्यायालय ने यह भी कहा था कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था। यह प्रस्तुत किया गया था कि विचारण न्यायालय के फैसले को पलटते समय, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने न तो परिसीमा के प्रश्न पर गौर किया था और न ही इस निष्कर्ष को पलटा था कि मुकदमा परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 59 के तहत परिसीमा द्वारा वर्जित था। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करते हुए, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने भी उक्त निष्कर्ष पर ध्यान नहीं दिया है।

8. अपील के समर्थन में उपस्थित होते हुए श्री एस.बी. सान्याल विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने परिसीमा से संबंधित प्रश्न का निर्णय किए बिना विचारण न्यायालय के फैसले को उलटने में गलती की और उच्च न्यायालय के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय के फैसले भी केवल ऐसे आधार पर अपास्त जाने योग्य थे।

9. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित होते हुए, विद्वान अधिवक्ता सुश्री रचना श्रीवास्तव ने सबसे पहले प्रस्तुत किया कि अब अपीलकर्ताओं की ओर से उठाया गया प्रश्न उनकी ओर से प्रथम अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था, इसलिए, इस पर विचार करने का कोई अवसर नहीं था। प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त प्रश्न नहीं उठाने के कारण, अपीलकर्ता इस अपील में इसे उठाने के हकदार नहीं थे।

10. सुश्री श्रीवास्तव ने यह भी प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय के समक्ष भी परिसीमा के संबंध में कोई विशेष विवाद्यक नहीं बनाया गया था और विचारण न्यायालय का कथित निष्कर्ष एक गुजरे हुए समय किये गये अवलोकन की प्रकृति का था।

11. अपनी दलीलों के समर्थन में, विद्वान वकील ने इस न्यायालय के फैसले पंजाब राज्य बनाम दर्शन सिंह [2004 (1) एससीसी 328] का

हवाला दिया और उस पर भरोसा किया, जिसमें सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 152 के तहत न्यायालय की शक्तियों की सीमाओं पर विचार करते हुए, इस न्यायालय के पास इस बात पर विचार करने का अवसर था कि, क्या इस न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील या विशेष अनुमति याचिका में एक नई याचिका जिसके संबंध में कोई विशिष्ट विवाद्यक विरचित नहीं किया गया है, उसे उठाया जा सकता है। सुश्री श्रीवास्तव ने प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से  अभिनिर्धारित किया कि लिखित कथन के परिसीमा के संबंध में अभिवचन के बावजूद, इस संबंध में कोई विशेष विवाद्यक विरचित नहीं किया गया था और उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई तर्क नहीं दिया, यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत कार्यवाही में उक्त प्रश्न पर विचार नहीं कर सकता। सुश्री श्रीवास्तव ने आग्रह किया कि उपरोक्त के अलावा, परिसीमा का विवाद्यक कानून और तथ्य का एक मिश्रित प्रश्न है।

ऐसी याचिका संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय के समक्ष नहीं उठाई जा सकती यदि पहले नहीं ली गई हो। अपनी दूसरी दलील के समर्थन में, सुश्री श्रीवास्तव ने इस न्यायालय के फैसले बालासरिया कंस्ट्रक्शन (पी) लिमिटेड बनाम हनुमान सेवा ट्रस्ट और अन्य पर भरोसा किया। [2006 (5) एससीसी 658] में जिसमें यह माना गया था कि परिसीमा से संबंधित उचित अभिवचनों के अभाव में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 (डी) के तहत एक मुकदमा खारिज नहीं

किया जा सकता है, खासकर जब  परिसीमा का प्रश्न कानून और तथ्य का एक मिश्रित प्रश्न है और केवल वादपत्र को पढ़ने के आधार पर मुकदमे को परिसीमा द्वारा बाधित नहीं माना जा सकता है।

12. इसी तरह का समान दृष्टिकोण इस न्यायालय ने नार्ने राम मूर्ति बनाम रावुला सोमसुंदरम और अन्य । [2005 (6) एससीसी 614] में लिया था जहां परिसीमा का प्रश्न भी कानून और तथ्य का एक अटूट रूप से मिश्रित प्रश्न था और ऐसे प्रश्न को जन्म देने वाले संबंधित तथ्यों पर विचार किए बिना परिसीमा की बाध्यता तय नहीं की जा सकती थी।

13. सुश्री श्रीवास्तव ने आग्रह किया कि इस अपील में, स्थिति अलग नहीं थी और अब परिसीमा की दलील दी गई है, कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न होने के कारण, इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के मद्देनजर इसे उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

14. संबंधित पक्षों की ओर से की गई दलीलों, उनके द्वारा उद्धृत निर्णयों और विषय पर संबंधित कानून पर विचार करने के बाद, हम मुख्य रूप से दो बिंदुओं पर सुश्री श्रीवास्तव की दलीलों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

15. सबसे पहले, प्रकट किए गए तथ्य स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि न तो प्रथम अपीलीय न्यायालय और न ही उच्च न्यायालय ने

परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3(1) पर ध्यान दिया, जो इस प्रकार है:-

> "3. परिसीमा द्वारा वर्जन- (1) धारा 4 से 24 तक (जिसके अन्तर्गत ये दोनों धाराएं आती हैं), अन्तर्विष्ट उपबंधों के अध्याधीन यह है कि विहित काल के पश्चात हर संस्थित वाद, की गई अपील और किया गया आवेदन खारिज कर दिया जायेगा यद्यपि प्रतिरक्षा के तौर पर परिसीमा की बात उठाई न गई हो।"

16. इस न्यायालय के निर्णय दर्शन सिंह (सुप्रा) के मामले में फैसला करने वाले माननीय न्यायाधीशों के ध्यान में नहीं लाने का उक्त प्रावधान लाना प्रतीत नहीं होता है।

17. यह अच्छी तरह से तय है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 3(1) अदालत पर किसी मुकदमे या अपील या आवेदन को खारिज करने का कर्तव्य डालता है, यदि निर्धारित अवधि के बाद किया गया हो, हालांकि, परिसीमा को बचाव के रूप में स्थापित नहीं किया गया है।

18. मौजूदा मामले में, लिखित कथन में ऐसा बचाव स्थापित किया गया है, यद्यपि उस संबंध में कोई विवाद्यक नहीं बनाया गया था। यद्यपि, जब विचारण न्यायालय धारा 3(1) के आदेश के अनुसार इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है, तो यह प्रथम अपीलीय

न्यायालय और उच्च न्यायालय का भी कर्तव्य था कि वह उक्त पर विचार करे और मुकदमे में तय किए गए विभिन्न विवाद्यक पर विचारण न्यायालय के फैसले को उलटने से पहले विवाद्यकों पर निर्णय लें। भले ही प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा वादी के पक्ष में विभिन्न विवाद्यकों का फैसला किया गया था, लेकिन इसका कोई फायदा नहीं हुआ क्योंकि मुकदमा परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 59 के तहत वर्जित बना रहा।

19. सुश्री श्रीवास्तव की दलील है कि परिसीमा की दलील अपीलीय मंचों के समक्ष नहीं ली गई है, इसे संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत कार्यवाही में इस न्यायालय के समक्ष इस आधार पर नहीं लिया जा सकता है कि परिसीमा का प्रश्न एक मिश्रित प्रश्न है। कानून और तथ्य, इस तथ्य से निरस्त हो जाते हैं कि अपीलीय न्यायालयों के निर्णयों के बाद भी मुकदमा परिसीमा द्वारा बाधित बना रहा क्योंकि विचारण न्यायालय के ऐसे निष्कर्ष को पहली अपील में या दूसरी अपील में उच्च न्यायालय द्वारा रद्द नहीं किया गया था।

20. यह बिल्कुल स्पष्ट है कि मामले के इस पहलू पर न तो प्रथम अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान दिया गया था, न ही इसे यहां अपीलकर्ताओं की ओर से उठाया गया था। इसलिए, सवाल यह

तय होना बाकी है कि क्या ऐसी याचिका अब विशेष अनुमति कार्यवाही में ली जा सकती है।

21. इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह सच है, जैसा कि इस न्यायालय ने बालासरिया कंस्ट्रक्शन (पी) लिमिटेड (सुप्रा) के मामले में और एच नर्ने राम मूर्ति के मामले (सुप्रा) में बताया था, कि यदि परिसीमा की दलीलकानून और तथ्य का एक मिश्रित प्रश्न है, इसे अपीलीय चरण में नहीं उठाया जा सकता है। हमें कानून के उक्त प्रतिपादना से कोई दिक्कत नहीं है। हम इस बात से सम्बद्ध है कि क्या उक्त प्रतिपादना इस मामले के तथ्यों पर लागू होती है। इस मामले में परिसीमा की दलील लिखित कथन में उठाई गई थी और यद्यपि उसके संबंध में कोई विशेष विवाद्यक नहीं बनाया गया था, फिर भी इसपर विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा एक निर्णय दिया गया था। परिसीमा अधिनियम की धारा 3(1) के अलावा, यहां तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11(डी) भी अदालत को उस वाद को खारिज करने का आदेश देता है जहां से वादपत्र में दिया गया कथन किसी भी कानून द्वारा वर्जित है, इस मामले में परिसीमा कानून द्वारा। इसके अलावा, जहां तक पूर्व के 1943 में, लछमी सेवक साहू बनाम राम रूप साहू और अन्य  के मामले में [एआईऔर 1944 प्रिवी काउंसिल 24] प्रिवी काउंसिल ने माना कि परिसीमा का एक बिंदु प्रथम दृष्टया अंतिम उपाय की अदालत में भी स्वीकार्य है, हालांकि इसे निचली अदालतों में नहीं लिया गया था।

22. उक्त प्रस्ताव के पीछे तर्क यह है कि किसी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित कुछ प्रश्न, जिसमें परिसीमा भी शामिल है, किसी मामले पर विचार करने और निर्णय लेने के न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की जड़ तक जाते हैं, अन्यथा, अधिकार क्षेत्र के बिना दिया गया निर्णय अवमान्य होगा। तथापि, हमें उक्त प्रतिपादना के बारे में विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है, मौजूदा मामले में ऐसा तर्क उठाया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय लिया गया था, लेकिन जहां तक निर्णय को पलटते समय प्रथम अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा इसे उलट नहीं किया गया था। जबकि मुकदमे में विरचित किए गए विवाद्यकों पर विचारण न्यायालय उलटते हुए। इसलिए, हमें उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री को रद्द करने और मुकदमे को प्रथम अपीलीय अदालत में भेजने में कोई हिचकिचाहट नहीं है ताकि यह सीमित प्रश्न तय किया जा सके कि क्या मुकदमे विधि द्वारा वर्जित था जैसा कि विचारण न्यायालय ने पाया कि विचारण न्यायालय द्वारा तय की गई परिसीमा से रोक दिया गया था। कहने की जरूरत नहीं है, यदि मुकदमा इतना वर्जित पाया जाता है, तो अपील खारिज कर दी जाएगी। यदि मुकदमा कालबाधित नहीं पाया जाता है, तो अन्य विवाद्यकों पर प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय को परेशान नहीं किया जाएगा। तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है, लेकिन खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद और्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अशोक चौधरी (और.जे.एस.), द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।